श्री गुरुवायुपुरेशस्तोत्राक्षरमाला

रचयिता : श्री स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती



रचयिता :



गुरुवायुपुरेशस्तोत्रोत्तरमाला

लेखक :

श्री स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती,

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, शिवानन्दाश्रम

भाषान्तरकर्त्री :

सुश्री प्रकाश अग्रवाल,

सुश्री कल्पना गुप्ता, एम०ए०



प्रकाशक :

डिवाइन लाइफ सोसाइटी,

पो० शिवानन्दनगर,

जिला टिहरी-गढ़वाल, (यू०पी०) हिमालय

मूल्य] १९७० [०-५०

डिवाइन लाइफ सोसाइटी के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्द जी द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा योग-वेदान्त फारेस्ट एकैडेमी प्रेस, शिवानन्दनगर, जिला टिहरी-गढ़वाल (उ०प्र०) हिमालय में मुद्रित

प्रथम संस्करण ... १९७०

१००० प्रतियाँ

मिलने का पता—

व्यवस्थापक, शिवानन्द पब्लीकेशन लीग,

पो० शिवानन्दनगर,

जि०—टिहरी-गढ़वाल (उ०प्र०)

हिमालय।

पाठकों से दो शब्द

"गुरुवायुपुरेशस्तोत्राक्षरमाला" नाम की यह पुस्तिका कतिपय श्रद्धालु भक्तों के अनुरोध पर लिखी गयी है। गुरुवायुपुरेश स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। उनके गुणानुवाद में लिखे गये स्तोत्रों की माला-रूप इस पुस्तिका की कुछ एक विशेषताओं का, पाठकों की जानकारी के लिए, यहाँ उल्लेख कर देना अनुचित न होगा।

यद्यपि अनेकों कवियों ने संस्कृत भाषा में असंख्य ग्रन्थों की रचना की है, किन्तु अभी तक यह पता नहीं चल सका है कि क्या उनमें से किसी ने अपनी रचनाओं में सजातीयद्वितीयाक्षर प्रास के प्रयोग द्वारा वैशिष्ट्य लाने का प्रयास भी किया है। उनकी रचनाओं में यत्र-तत्र विभिन्न प्रकार के अनुप्रास देखने को मिलते हैं। शिशुपाल-वध, नैषध, चम्पू तथा नलोदय के ग्रन्थकारों ने, इन रचनाओं में विविध प्रकार के अनुप्रासों का प्रयोग किया है। संक्षेप में, सच्चे गुणों के मूल्याङ्कन के रसिक, सहृदय विद्वान् ही इस बात को स्वीकार करेंगे कि समस्त भाषाओं के उच्च कोटि के काव्यों का प्राचीनतम तथा सर्वश्रेष्ठ भूषण यदि कोई है तो वह अनुप्रास ही है। इन छन्दों में जो अनुप्रास और यमक लाने के प्रयास की धृष्टता की गयी है, उसके लिए मैं पाठकों से क्षमा-प्रार्थी हूँ।

इस पुस्तिका का प्रथम भाग, जिसकी रचना में सभी श्लोकों की तृतीय पंक्ति का प्रथम अक्षर 'ख' वर्ण रखा गया है, उन भक्तों के लिए विशेष रोचक सिद्ध होगा, जो अक्षर-श्लोक-प्रतियोगिता में रुचि रखते हैं।

पाठकों को थकान तथा नीरसता से बचाने के लिए इस पुस्तिका में भिन्न-भिन्न प्रकार के वृत्तों का प्रयोग किया गया है।

यह लघु पुस्तक गुरुवायुपुरेश की निरन्तर पूजा तथा ध्यान के परिणामस्वरूप अन्तर्जात दिव्य प्रेरणा का फल है। यदि उदार-हृदयी, प्रभु के सच्चे भक्त-जन इन स्तोत्रों का नित्य नियमित रूप से श्रद्धा एवं भक्तिपूर्वक पाठ करेंगे तो मैं अपने प्रयास को पूर्ण सार्थक हुआ समझूँगा।

स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती

प्राक्कथन

संस्कृत भाषा की एक विशेषता यह है कि इसमें गणित, आयुर्वेद तथा ज्योतिष शास्त्र के ग्रन्थ पद्यमयी भाषा में उपलब्ध हैं। अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि इस लचीली भाषा में आध्यात्मिक काव्य अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हो। जिन लोगों को ऐसे परम परिशुद्ध एवं सुगठित साहित्य के सौष्ठव में रस नहीं है और न जिन्हें इसका प्रशिक्षण ही प्राप्त है, वे लोग इस भाषा को निरर्थक घोषित करते फिरते हैं। एक व्यक्ति साधारणतया अपने दायें हाथ से दीर्घकाल तक लिखने का अभ्यास कर विशुद्धता और तीव्रगति से स्वच्छ लिपि में लिखने में सफल हो जाता है, किन्तु यदि वह इस कला में अपने दायें हाथ की स्पर्द्धा में आकर अकस्मात् बायें हाथ से लिखने का प्रयास करे तो यह उसके लिए एक कटु अनुभव ही होगा। ठीक ऐसा ही कुछ घटित होता है जब अपनी मातृभाषा अथवा आंग्लभाषा में प्रशिक्षित व्यक्ति संस्कृत भाषा से झगड़ पड़ता है; क्योंकि यह उसके अधिकार-क्षेत्र से बाहर की बात है। संस्कृत मृत नहीं है; वह अमर है।

स्वामी ज्ञानानन्द जी कृत प्रसिद्ध गुरुवायु मन्दिर में पूजित भगवान् के स्तोत्र इस बात का एक अन्य निराकरण है कि संस्कृत भाषा मर चुकी है। इस भक्तिरसपूर्ण गीत काव्य का भक्ति भावोद्रेक, यथोचित वर्ण-विन्यास, गम्भीर स्वर-माधुर्य, साहित्यिक उत्कृष्टता, आभूषण सम अलङ्कार तथा सममात्रिकता हमें प्राचीन काल के मनीषियों द्वारा प्राप्त मूर्धन्य कोटि की साहित्यिक पूर्णता की स्मृति दिलाते हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इन अलौकिक छन्दों में **अमृत भारती** सक्रिय रूप से सजीव है। स्वामी ज्ञानानन्द जी एक जन्मजात कवि हैं, अन्यथा प्रशिक्षण मात्र से वे ईश्वर-भक्ति के अजस्र प्रवाह को ऐसे मधुर रूप में उदात्त विषय-वस्तु से सुसज्जित न कर पाते। इस पुस्तक के सम्बन्ध में अपने हार्दिक उद्गार लिपिबद्ध करते हुए मैं यह कहने को विवश हूँ कि

इस प्रकार की सुन्दर भक्तिरसपूर्ण रचनाएं केवल इने-गिने भक्तों तक ही सीमित नहीं रहने देकर उनसे सभी संस्कृत प्रेमियों को अवगत करा देना चाहिए। हमारी कामना है कि सहस्रों लोगों को प्रभु के चरणों की ओर आकर्षित करने वाली इस प्रसार की और मनोहर रचनाएं हमें स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती की वरद लेखनी से प्राप्त होती रहें !

उत्तरकाशी,
२६-२-१९७०

स्वामी विमलानन्द पुरी

आमुख

आधुनिक युग में संस्कृत भाषा के आदर्श कोटि के कवि नहीं हैं, इस सामान्य धारणा को हमारे पूज्य स्वामी ज्ञानानन्द जी ने मिथ्या सिद्ध कर दिया है। उन्होंने हमें शिवानन्दचरितम्, शिवानन्दस्तोत्र-पुष्पांजलि, शिवानन्द-सहस्रनामस्तोत्र, सुप्रभातमावलि आदि जैसे अनेक काव्य-ग्रन्थ प्रदान किये हैं। इन सब का शब्दविन्यास समृद्ध, अलङ्कार सर्वथा निर्दोष तथा शैली स्फूर्तिदायी है। सम्प्रति इस संस्कृत काव्य-माला में गुरुवायुपुरेशस्तोत्राक्षरमाला के रूप में एक और सुन्दर पुष्प संयोजित कर दिया गया है। इस ग्रन्थ के दो भाग हैं और प्रत्येक भाग में ५१ श्लोक दिये गये हैं। दोनों भागों के श्लोकों का आरम्भ क्रमशः अ से लेकर क्ष वर्ण तक के वर्णों से होता है। प्रथम भाग की विशिष्टता यह है कि इसमें 'ख' वर्ण प्रत्येक श्लोक की तृतीय पंक्ति के प्रथम अक्षर के रूप में प्रयोग किया गया है। द्वितीय भाग के प्रत्येक श्लोक में सजातीयद्वितीयाक्षर प्रास है। प्रास और अनुप्रास के प्रयोग में स्वामी जी भारवि, माघ आदि अपने पूर्ववर्ती कवियों का भी अतिक्रमण कर गये हैं। यद्यपि इन लोगों को भी ऐसी रचनाओं का गौरव प्राप्त है, फिर भी उन लोगों ने अपनी रचनाओं में उनका साद्यन्त प्रयोग नहीं किया है। इसके साथ स्वामी जी बहुत ही सरल भाषा का प्रयोग करते हैं और जहाँ तक उनके पदलालित्य का सम्बन्ध है, वे इसमें दण्डी के समकक्ष हैं। काव्य में नीरसता न आये, इसके लिए स्वामी जी ने अपनी रचना में अनेक प्रकार के वृत्तों का प्रयोग किया है। स्वामी जी रस विशेष के अनुकूल उपयुक्त शब्दों के प्रयोग करने की क्षमता रखते हैं और इसमें ही उनकी महानता का रहस्य है। उनके पदसन्निवेशचातुर्य तथा उचितपदप्रयोगचातुर्य अत्युत्कृष्ट हैं। इसमें वे जयदेव से किसी भी रूप में कम नहीं हैं। इन गुणों के साथ ही साथ इस रचना का प्रत्येक श्लोक गुरुवायुपुरप्पन की भक्ति से आप्लावित है। इन्हें उपयुक्त रागों में सुगमता से लयबद्ध किया जा सकता है। जिसका जीवन भगवान् की,

उनके विविध रूपों में, महिमा गायन के लिए समर्पित हो, एक ऐसे व्यक्ति से इस दिव्य भेंट को पाकर गुरुवायुपुरप्पन के भक्तगण निश्चय ही भाग्यशाली हैं।

स्वामी जी ने इस पुस्तक का ग्रामुख लिखने के लिए मुझसे अनुरोध किया, इसे मैं अपना ग्रहोभाग्य ही समझती हूँ। मैं यह मानती हूँ कि उनका संस्कृत तथा संस्कृत के विद्यार्थियों के प्रति विशेष प्रेम होने के कारण ही उन्होंने मुझे यह कार्य सौंपा। कविता का मूल्यांकन करने के लिए कवि होना आवश्यक नहीं हुआ करता। सुन्दर कविता की रसिक तथा स्वामी जी की काव्य-रचना की देन की एक स्पर्द्धी प्रशंसक होने के नाते, मैं स्वयं को संस्कृत की इस सुन्दर रचना का ग्रामुख लिखने की अधिकारी समझती हूँ।

डा० (श्रीमती) सीताकृष्ण नम्बियार,
एम०ए० (संस्कृत) केरल, एम०ए० (हिन्दी) आगरा,
पी०एच-डी० (संस्कृत) बान।

एक मूल्यांकन

यह लिखते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि स्वामी ज्ञानानन्द जी सरस्वती ब्रह्मनिष्ठ परम कोटि के संन्यासी के साथ ही भक्ति-रस-पूरित कवि भी हैं। संस्कृत भाषा में आपकी काव्य रचनाएं प्रथम श्रेणी की हैं और आपके द्वारा रचित स्तोत्र शङ्कर एवं जयदेव ऐसे कवियों के समकक्ष के हैं। अलंकार एवं छन्द-विन्यास भी आपके काव्य में श्रेष्ठतम हैं। प्रस्तुत काव्य कृति 'गुरुवायुपुरेशस्तोत्राक्षरमाला' मेरे कथन का ज्वलन्त उदाहरण है। इसमें भाव-प्रवणता, रस-प्रवाह तथा अलंकार एवं छन्द-विन्यास की कुशलता के साथ प्रत्येक भाग के श्लोक वर्णमाला-क्रम के अनुसार हैं, अर्थात् प्रथम श्लोक 'अ' से प्रारम्भ होता है और अन्तिम श्लोक का प्रथम अक्षर 'क्ष' है। मैं स्वामी जी को इस प्रकार के भाव-भक्ति पूरित काव्य की रचना के लिए कोटिशः बधाई देता हूँ एवं उनका अभिनन्दन करता हूँ।

प्रो० रमेशचन्द्र अवस्थी, एम०ए०,
अध्यक्ष संस्कृत-विभाग,
डी०ए०वी० कालेज, लखनऊ।

१५ जुलाई १९७०.

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

गुरुवायुपुरेशस्तोत्राक्षरमाला

प्रथमो भागः

(१)

अन्तः सन्ततमन्तरायरहितं दिव्यर्षिभिर्वीक्षितं
सन्तप्तार्तिविनाशनैकनिरतं भक्तावने दीक्षितम् ।
खल्यादूरगतं सुरारिनिकरप्रध्वंसिनं सज्जना-
वल्याधारमनारतं गुरुमरुद्गेहाधिनाथं भजे ॥

दिव्य ऋषियों द्वारा (अपने अन्तः करणों में) सर्वदा व्यवधानरहित भाव से दृष्ट, दुःखी जनों के दुःख-विनाश में ही रत, भक्तों के कल्याण-कर्त्ता, दुष्ट व्यक्तियों के लिए अगम्य (तथा) असुर-समूह के नाशकर्त्ता, सज्जनों के आधार-रूप श्री गुरुवायुपुरेश का मैं सदा भजन करता हूँ।

(२)

आतङ्कापहमङ्घ्रिपङ्कजजुषां भक्तोत्तमानां सता-
मातन्वानममन्दमोदमनिशं ध्यानैकतानात्मनाम् ।
खद्योतप्रतिमप्रभाविलसितं वातालयाधीश्वरं
सद्योगिप्रकरान्तरङ्गसरसीहंसं सदा भावये ॥

(निज) चरण-कमलों में प्रीति रखने वाले सच्चे तथा उत्तम भक्तों के भय को दूर करने वाले, (अपने) ध्यान में नित्य एकाग्र हुई आत्माओं के लिए उत्तमोत्तम आनन्द का प्रसार करने वाले, सूर्यवत् कान्ति से शोभायमान (तथा) श्रेष्ठ योगिजनों के अन्तःकरणरूपी सरोवर में हंस (के समान विलास करने वाले) श्री गुरुवायुपुराधीश का मैं सदा ध्यान करता हूँ।

(३)

इच्छामुज्झितवद्भिरैहिकसुखेष्वध्यात्ममार्गोन्मुखैः
स्वच्छान्तःकरणैर्महामुनिजनैरालोक्यमानाकृतिम् ।
खिन्नानाखिललोकशोकनिकरध्वान्तांशुमन्तं सदा
भिन्नाशेषसुरद्विषं गुरुसमीरागारवासं भजे ॥

इहलौकिक सुखों की इच्छा को त्याग देने वाले अध्यात्ममार्गोन्मुखी निर्मलहृदय महामुनियों द्वारा दृष्ट स्वरूप वाले, समस्त लोकों के शोकसमूह-रूपी अन्धकार को नष्ट करने वाले सूर्य (तथा) निःशेष असुरों का अन्त करने वाले श्री गुरुवायुपुरेश का मैं सदा भजन करता हूँ।

(४)

ईहा नास्ति समस्तवस्तुषु बहिर्दृश्येषु मे मानसे
मोहावेशविधायकानि सकलान्येतानि निस्संशयम् ।
खल्वेकं तव दिव्यमङ्गलतनुध्यानामृतं देहिनां
शल्यध्वंसकरं तदेव मरुदागारेश मे दीयताम् ॥

मेरे मन में समस्त (सांसारिक) पदार्थों तथा बाह्य दृश्यों के प्रति

लालसा नहीं है। निस्सन्देह, ये सभी मोह के आवेश को उत्पन्न करने वाले हैं। दिव्य कल्याण का प्रसार करने वाले तुम्हारे रूप का एकमात्र ध्यान-रूप अमृत ही प्राणियों के समस्त कष्टों का निवारक है। हे गुरुवायुपुरेश (श्रीकृष्ण) ! वही (निज ध्यानामृत ही आप) मुझे प्रदान करें !

(५)

उद्यत्पूर्णशशाङ्ककोमलमुखं गोपाङ्गनामोहनं
हृद्यत्यन्तमुदावहं प्रणमतां सर्वेष्टसन्दोहनम् ।
खर्वं गर्वमशेषदुष्कृतकृतां नानाविधैश्चेष्टितैः
कुर्वन्तं मरुदालयेशमनिशं भक्त्या समाराधये ॥

उदित होते हुए पूर्ण चन्द्र की भांति कोमल मुख वाले, गोपिकाओं को मोहित (तथा) प्रणाम करते हुए (भक्तजनों) के हृदयों को अत्यधिक आनन्दित करने वाले, सबकी इच्छाओं के पुंजरूप तथा नाना प्रकार के कार्यों द्वारा दुष्कर्मा व्यक्तियों के समस्त दर्प को चूर्ण करने वाले श्री गुरुवायुपुरेश की मैं सदा भक्तिपूर्वक आराधना करता हूँ।

(६)

ऊढामोदमनारतं गुणवतां पूताशयानां नृणां
गाढार्तिप्रकरापहं मुरहरं वातालयाधीश्वरम् ।
खण्डेन्दुप्रतिमालिकं पदसरोजानम्रपीयूषभुक्-
षण्डेड्यं सरसीरुहाक्षमखिलाधारं सदा भावये ॥

निरन्तर परमानन्द रूप, अर्द्धचन्द्र के समान ललाट वाले, चरण-कमलों में नमित अमृतपायी (देव-समूहों) द्वारा स्तुत, कमल-नयन,

अखिलाधार, मुर-हन्ता श्री गुरुवायुपुरेश का मैं सदा ध्यान करता हूँ, जो पवित्र विचारों वाले गुणी व्यक्तियों के घोर दुःख समूह को दूर करते हैं।

(७)

ऋद्धज्योतिःस्फुरितवदनं सर्वगोपीजनानां
शुद्धप्रेमप्रसरविषयं मारुतागारनाथम् ।
खेदव्रातं निजपदजुषां नाशयन्तं नितान्तं
वेदप्रोक्तप्रकृतिविभवं माधवं भावयेऽहम् ॥

समृद्ध ज्योति से दीप्त मुख वाले, समस्त गोपिकाओं के विशुद्ध प्रेम के विषय-भूत, निज चरण-प्रेमियों के दुःखों को सर्वथा नष्ट करने वाले, वेदप्रोक्त प्रकृति वैभव (से सम्पन्न) श्री गुरुवायुपुरेश (माधव) का मैं ध्यान करता हूँ।

(८)

ऋद्धकान्तिनाशितपयोदगणावलेपं
नाकाधिपादिसुरपालनजागरूकम् ।
ख्यातानिलालयपतिं शरणागतानां
शातावहं मुरहरं शरणं प्रपद्ये ॥

इन्द्रादि देवों के पालन में जागरूक, शरणागतों को आनन्द प्रदान करने वाले, मुर-हन्ता, (अपनी) चपल कान्ति से मेघ-समूहों के गर्व को नष्ट करने वाले, प्रसिद्ध गुरुवायुपुरेश (श्रीकृष्ण) की मैं शरण में जाता हूँ।

(९)

ऌसूनुराजसोदरं विदारितासुरं बिस-
प्रसूननेत्रमच्युतं श्रितावनैकदीक्षितम् ।
खरांशुभास्वरं सदा सदाशयैर्निषेवितं
पुराणपूरुषं भजे समीरगेहवासिनम् ॥

देवराज इन्द्र के भ्राता, असुर-विनाशक, कमल-नयन, अच्युत, (अपने) आश्रित जनों की रक्षा में तत्पर, सूर्यवत् भास्वर तथा पवित्र आत्माओं द्वारा सदा सेवित, पुराणपुरुष श्री गुरुवायुपुराधीश का मैं भजन करता हूँ।

(१०)

ॡरूपधारिनृगमोक्षदमक्षताभं
चारूरुशोभितमनोहरपीतचेलम् ।
खर्वीकृतासुरमदं मरुदालयेश-
मुर्वीसुरार्चितपदं सततं भजेऽहम् ॥

सरीसृप (गिरगिट)-रूप-धारी नृग (राजा) को मोक्ष प्रदान करने वाले, अक्षुण्ण आभा-सम्पन्न, मनोहर पीत वस्त्रों से शोभित सुन्दर अंगों वाले (तथा) असुरों के दर्प को क्षय करने वाले उन श्री गुरुवायुपुरेश का मैं सदा भजन करता हूँ, जिनके चरणों की वन्दना ब्राह्मण जन करते हैं।

(११)

एकं श्री गुरुवायुमन्दिरपतिं देवं दयासागरं
श्रीकण्ठाम्बुजसम्भवादिदिविषत्सन्दोहसम्भावितम् ।

खेलालोलुपमङ्गनाभिरभिरामाभीरजाभिर्भृशं
तालाङ्कानुजमाश्रितावनपरं भक्त्या समाराधये ॥

दया के सागर, ब्रह्मादि देव-समूहों द्वारा विवेचनीय, सुन्दरी गोपिकाओं के साथ क्रीड़ा हेतु अत्यधिक समुत्सुक, बलभद्रानुज, अपने आश्रित जनों के हित चिन्तन में तत्पर, एकमात्र श्री गुरुवायुपुरेश की मैं भक्तिपूर्वक आराधना करता हूँ।

(१२)

ऐश्वर्यावहमात्तमोदमनिशं धर्माध्वसञ्चारिणां
विश्वक्षेमविधायकं विधिनुतं विश्वार्तिविच्छेदकम् ।
खट्वारूढनृणां विदूरमनिलागारेश्वरं शाश्वतं
वट्वाकारधरं बलेर्मदहरं ध्यायामि पीताम्बरम् ॥

धर्ममार्गानुयायी जनों को सदा आनन्दपूर्वक ऐश्वर्य प्रदान करने वाले, विश्व-क्षेम-विधायक, ब्रह्मा द्वारा नमस्कृत, संसार के कष्टों को दूर करने वाले, दीर्घसूत्री मनुष्यों से दूर (रहने वाले), शाश्वत, पीताम्बरधारी, श्री गुरुवायुपुरेश का मैं ध्यान करता हूँ, जिन्होंने वामन-रूप धारण कर बलि के गर्व का अन्त किया।

(१३)

ओङ्कारात्मकमात्मभक्तनिकरत्राणैबद्धव्रतं
पङ्कापेतहृदां सदा सुमनसां सर्वेष्टसन्दायकम् ।
खिद्रान् भक्तियुतान् क्षणेन धनदान् कुर्वाणमार्तोत्करे
मुद्राहीनकृपं मरुत्पुरपतिं पद्मापतिं भावये ॥

ओंकाररूप, निज भक्त-समूह के त्राणार्थ व्रतबद्ध (तथा) निष्पाप हृदय सज्जन व्यक्तियों को समस्त अभीष्ट प्रदान करने वाले, लक्ष्मीपति, श्री गुरुवायुपुरेश का मैं ध्यान करता हूँ, जो अपने दरिद्र भक्तों को क्षणमात्र में धनपति (कुबेर) बना देते हैं तथा आर्त्तजनों पर असीम कृपा करते हैं।

(१४)

औदासीन्यविहीनसाधकगणेष्वात्माश्रितेष्वन्वहं
मोदाधानपरायणं परिणतप्रज्ञैर्मुदा संस्तुतम् ।
खेदापोहनतत्परं निजपदाम्भोजाभिलीनात्मनां
वेदान्तप्रतिपादितोरुविभवं वातालयेशं भजे ॥

उदासीनता से रहित (अर्थात् दत्तचित्त) अपने आश्रित साधकगणों को आनन्द प्रदान करने में कुशल, बुद्धिमान् व्यक्तियों द्वारा हृदय से संस्तुत, अपने चरण-पद्मों में लीन जीवों के दुःख हरण में तत्पर, श्री गुरुवायुपुरेश का मैं भजन करता हूँ, जिनका विशाल वैभव वेदों में प्रतिपादित किया गया है।

(१५)

अंभोजासनवासवादिसुमनोवृन्दैः समाराधितं
दम्भोपेतनृणामगोचरमधर्मोच्चाटनैकव्रतम् ।
खण्डीकर्तुमनर्थजालमनिशं नानाविधं मामकं
चण्डीशाभिनुतं समीरसदनाधीशं भजे सादरम् ॥

ब्रह्मा तथा इन्द्रादि देवों द्वारा पूजित, दम्भी मनुष्यों के लिए अगोचर, अधर्म को उखाड़ फेंकने का एकमात्र व्रत धारण किये हुए,

चण्डीपति (परमेश्वर शिव) द्वारा भी स्तुत, श्री गुरुवायुपुरेश का मैं अपने नाना प्रकार के (दु:खादि रूप) अनर्थ-जाल के विध्वंसार्थ आदरपूर्वक भजन करता हूँ।

(१६)

अः कल्याणकरः सतां स भगवान् दूरीकरोतु द्रुतं
साकल्येन मदीयचित्तकदनं वातालयाधीश्वरः ।
खान्तोद्घृष्टसटासमन्वितनृसिंहाकारमालम्ब्य यः
स्वान्तोदीर्णरुषा जघान दनुजं प्रह्लादतातं पुरा ॥

सज्जनों का कल्याण करने वाले वह भगवान् श्री गुरुवायुपुरेश मेरे चित्त को कष्ट देने वाले समस्त (तत्त्वों) को शीघ्र दूर करें, जिन्होंने प्राचीन काल में आकाश तक फैले केसरों से युक्त नृसिंहाकार धारण कर, अत्यधिक रोष (-युक्त हृदय) से प्रह्लाद के पिता दैत्य (हिरण्य-कश्यप) का वध किया था।

(१७)

कलुषहरणदीक्षं स्वाङ्घ्रिपद्माश्रयाणां
विलुलितकचभाराभीरनारीपरीतम् ।
खलु पवनपुरेशं देवमेकं व्रजोर्वी-
विलुठितसुकुमाराकारमाराधयेऽहम् ॥

अपने चरणकमलों का आश्रय लेने वाले (मनुष्यों) के पापों को दूर करने में कुशल, कुञ्चितकेशभार से युक्त गोपिकाओं से घिरे हुए (तथा) व्रजभूमि में लोटते हुए सुन्दर बालक की आकृति वाले एकमात्र देव श्री गुरुवायुपुरेश की मैं आराधना करता हूँ।

(१८)

खलदनुजकृतान्तं भक्तवात्सल्यवन्तं
चलदलकललाटं दीनलोकानवन्तम् ।
खमणिसदृशभासं मारुतागारवासं
सुमहितमुनिवृन्दैर्भावितं भावयेऽहम् ॥

मैं दुष्ट दैत्यों का वध करने वाले, भक्तों के प्रेम से सम्पन्न, दीन जनों के रक्षक, चञ्चल अलकावलि से शोभित ललाट वाले, सूर्यवत् भास्वर (तथा) महामुनिवृन्दों द्वारा ध्यान किये जाने वाले श्री गुरुवायुपुरेश की भावना करता हूँ।

(१९)

गतदुरितसमूहैः साधुभिर्भक्तिपूर्वं
कृतनुतिततिवर्षं वातगेहाधिवासम् ।
खरनखरविदीर्णक्रूरदैत्याधिराजं
सुरदरहरमीडे नारसिंहस्वरूपम् ॥

मैं नृसिंहरूप में अपने तीक्ष्ण नखों से क्रूर दैत्याधिराज को विदीर्ण कर देवताओं के भय को दूर करने वाले श्री गुरुवायुपुरेश का स्तवन करता हूँ जिनपर निष्पाप साधुसमूह भक्तिपूर्वक स्तुतियों की वर्षा करते हैं।

(२०)

घनचयसमवर्णं भूरिकारुण्यपूर्णं
सनकमुखमुनीन्द्रैः सन्ततं स्तूयमानम् ।

खगपरिवृढकेतुं भक्तकल्याणहेतुं
निगमलसितमीडे मारुतागारनाथम् ॥

मैं मेघसमूह के समान (श्याम) वर्ण वाले, अतिशय करुणामय, सनकादि महामुनियों द्वारा सदा स्तुत, भक्तों के कल्याण के हेतुभूत (तथा) वेदों में प्रकाशित, गरुड़ध्वजी श्री गुरुवायुपुरेश की स्तुति करता हूँ।

(२१)

ङमेचककलेवरं समनुरक्तगोपीजनैः
समेतमिननन्दिनीपुळिनकेलिलोलाशयम् ।
खलीनविलसत्करं विदितभारतायोधने
खिलीकृतरिपूत्करं पवनगेहवासं भजे ॥

मैं अंजन के सदृश कृष्णवर्ण शरीर वाले, अनुरक्त गोपिकाओं के साथ कालिन्दी-तट पर प्रसन्नतापूर्वक क्रीड़ा करने के इच्छुक, प्रसिद्ध महाभारत युद्ध में अश्वरास द्वारा सुशोभित करों वाले (तथा) रिपु-समूह के नाशकर्त्ता श्री गुरुवायुपुरेश का भजन करता हूँ।

(२२)

चञ्चरीकनिकरोपमालकलसन्मनोहरमुखाम्बुजं
चञ्चलातुलितपीतवाससममेयकान्तिपरिवेष्टितम् ।
खञ्जरीटनयनं जनार्दनमनेकभक्तजनतामनः–
कञ्जभानुमनिलालयेश्वरमनारतं मनसि भावये ॥

मैं भ्रमर समूह के समान अलकावलि से घिरे मनोहर मुखकमल

वाले, विद्युत् की भाँति (ज्योतिर्मान) पीताम्बरधारी, अपरिमेय कान्ति से वेष्टित, खञ्जरीट के समान नयनों वाले, नाना भक्तजनों के मनस्-कमल के (लिए) सूर्य (सदृश्य), जनार्दन श्री गुरुवायुपुरेश का मन से ध्यान करता हूँ।

(२३)

छद्मापेतहृदां नृणामविरतं सर्वाभिलाषप्रदं
पद्मावल्लभमप्रमेयविभवं वातालयाधीश्वरम् ।
खेदावेशवशंवदावनपरं कारुण्यवाराकरं
पादानम्रजनाशुभोत्करहरं शौरिं समाराधये ॥

मैं निश्छलहृदयमनुष्यों की समस्त इच्छाओं को पूर्ण करने वाले, लक्ष्मी जी के पति, अपरिमित दिव्य वैभव से सम्पन्न, करुणा-सागर, दुःखी जनों की रक्षा में तत्पर, (तथा) अपने चरणकमलों में नमन करने वाले मनुष्यों के अशुभहर्त्ता श्री गुरुवायुपुरेश की आराधना करता हूँ।

(२४)

जननमरणसिन्धुमग्नमेनं
जनमनिलालयवास दीनदीनम् ।
खलनिकरविदूर पाहि विष्णो
जलजविलोचन दीनलोकबन्धो ॥

दुष्टजनों के समूह से दूर रहने वाले, हे कमलनयन, दीनबन्धु, श्री गुरुवायुपुरवासी विष्णु ! जन्म-मरण के सिन्धु में निमग्न इस दीनातिदीन (मनुष्य) की रक्षा कीजिए !

(२५)

झटिति सकलतापान् नाशयत्वच्युतो मे
स्फुटितमरकताभः श्रीकरः पद्मनाभः ।
खचितविविधरत्नप्रोल्लसत्काञ्चिधारी
प्रचितसुकृतगम्यः श्रीसमीरालयेशः ॥

स्वच्छ मरकत मणि के समान आभा वाले, (भक्तों को) श्रीप्रदायक, नाना रत्नजटित दीप्तिमान् मेखला को धारण करने वाले, पुण्यकर्मा लोगों के लिए सुगम्य, पद्मनाभ, अच्युत श्री गुरुवायुपुरेश मेरे समस्त कष्टों को तत्काल नष्ट करें !

(२६)

त्वभञ्जनं सुरद्विषां जगद्द्रुहां विनाशनं
प्रभञ्जनालयेश्वरं प्रभाविशेषभास्वरम् ।
खिलीकृतारिसञ्चयं स्वपादपङ्कजद्वये
निलीनचेतसां सतां शुभावहं विभावये ॥

मैं अत्यधिक कान्ति से प्रकाशमान्, असुर सेनाओं तथा जगत्द्रोही (तत्त्वों के) विनाशकर्त्ता, शत्रु-समूहों का संहार करने वाले श्री गुरुवायु-पुरेश का ध्यान करता हूँ जो अपने चरण-कमलों में लीनचित्त-सज्जन व्यक्तियों के शुभ का विधान करते हैं ।

(२७)

टीकां करोमि भवतो भवतोयराशे-
रकान्तमध्यपतनेन नितान्ततान्तः ।

खेलाविलोलगुरुवायुपुरे मुरारे
श्रीलास्यकेलिनिलयाव दयाम्बुधे माम् ॥

गहन संसार-सागर में गिरने से नितान्त दुःखी तथा अकेला पड़ा मैं, गुरुवायुपुर में क्रीड़ा-विलास करने वाले, लक्ष्मी के लास्य तथा केलि के केन्द्र, दयासागर मुरारि आप का स्तवन करता हूँ। आप मेरी रक्षा करें !

(२८)

ठमुखसुरनिषेव्यं दुष्टदैतयकालं
सुसुखमखिलभक्तक्षेमकृत्यैकदीक्षम् ।
खलविपिनकृशानुं शार्ङ्गपाणिं नभस्व–
न्निलयकृतनिवासं वासुदेवं भजेऽहम् ॥

मैं शिवादि देवों द्वारा पूज्य, दुष्ट दैत्यों के कालरूप, गुरुवायुपुर-निवासी, सुन्दर मुख वाले, शार्ङ्गपाणि श्री वासुदेव का भजन करता हूँ जो एकमात्र समस्त भक्तों के कल्याण में ही तत्पर तथा दुष्ट जनों के वन के लिए दावानल के समान हैं।

(२६)

डिण्डीरसन्निभमनोहरमन्दहासं
खण्डीकृतासुरगणं तरुणार्कभासम् ।
खेयायिगीतयशसं निजभक्तदासं
ध्यायामि चारुतरमारुतमन्दिरेशम् ॥

मैं समुद्र के फेन की भाँति मनोहर मुस्कान वाले, असुर-समूहों के

विनाशकर्त्ता, नवोदित सूर्य के समान भास्वर, (तथा) अपने भक्तों के दास, अत्यन्त सुन्दर, वायुमन्दिरपति (श्रीकृष्ण) का ध्यान करता हूँ, जिनका यशोगान देवगण करते हैं।

(३०)

ढौकनं विविधपद्यजालमयमर्पितं तव पदाम्बुजे
नाकनायकमुखामरोत्करकिरीटकोटिमणिदीपिते ।
ख्यातवातनिलयेश निस्तुलमहोविलास विमलात्मनां
शातदायक जगन्नियामक पयोजनाभ परिपाहि माम् ॥

हे प्रसिद्ध वायुपुरेश ! विविधपद्यसमूहमयी यह स्तुति, इन्द्रादि देवगणों के मुकुट की करोड़ों मणियों से दीप्त तुम्हारे चरण-कमलों में अर्पित है। हे अतुलनीय महान् विलास करने वाले, पवित्रात्माओं के आनन्ददाता, जगन्नियन्ता पद्मनाभ ! मेरी रक्षा कीजिए !

(३१)

णं सर्वगोपालकबालिकानां
कंसद्विषं गोपकिशोरवेषम् ।
खिन्नार्तिविच्छेदकमब्जनाभं
वन्दे सदा मारुतमन्दिरेशम् ॥

मैं समस्त गोपिकाओं के प्रिय, कंस-द्वेषी, दुःखीजनों के कष्टों को दूर करने वाले, किशोर गोप-रूपधारी, पद्मनाभ श्री वायुमन्दिर-पति (श्रीकृष्ण) की सदा वन्दना करता हूँ।

(३२)

तरुणारुणकोटिभास्वरं
करुणावारिधिमार्तपालकम् ।
खलदानववैरिणं मरु–
न्निलयेशं हरिमाश्रयेऽनिशम् ।।

मैं करोड़ों नवोदित सूर्यों के समान भास्वर, करुणासागर, दु:खीजनों के पालक तथा दुष्ट दानवों के वैरी, श्री गुरुवायुपुरेश हरि का सदा आश्रय लेता हूँ।

(३३)

थं सतां सततमादधानमपदानमैश्वरमनारतं
शंसतां विततचेतसामभिमतार्थदानकरणे रतम् ।
खादुकार्भकवदन्वहं पशुपयोषितां सदनसञ्चयात्
स्वादुभोज्यनिकराशिनं शिवदमाशुगालयपतिं भजे ।।

सज्जनों के सुख के अजस्र स्रोत, अपनी सर्वोत्कृष्ट कृतियों का निरन्तर गुणानुवाद गायन करने वाले विशाल हृदय व्यक्तियों के अभिमत फल प्रदान करने में सदा तत्पर गुरुवायुपुरेश का मैं भजन करता हूँ; जिन्होंने क्षुधातुर शिशु का रूप धारण कर गोपाङ्गनाओं के घर में प्रवेश कर उनका स्वादिष्ट भोजन खाया।

(३४)

दानवान्तकमनन्यभक्तिम–
न्मानवावनपरं कृपाकरम् ।

खण्डितारिनिकरं धृतादरं
मण्डितानिलनिकेतनं भजे ॥

मैं दानवों का अन्त करने वाले, अनन्य भक्ति से (अपनी साधना करने वाले भक्तों की) रक्षा में तत्पर, कृपालु (तथा) शत्रुसमूह के विनाशक श्री गुरुवायुपुरेश का आदरपूर्वक भजन करता हूँ।

(३५)

धन्यात्मत्वं गुरुमरुदगारावलोकान्निकामं
संन्यासित्वं सकलविषयेष्वाप्तवैराग्ययोगात् ।
खल्वेते मे पवनसदनाधीश लब्धेऽपि माया–
शल्येनाहं दलितहृदयोऽस्म्यन्वहं पालयैनम् ॥

श्री गुरुवायुपुरेश के दर्शन से मैं परम धन्य हो गया हूँ तथा समस्त (भौतिक) विषयों में वैराग्य हो जाने से (मैंने) संन्यासित्व को प्राप्त किया है (तथापि) इन सब को प्राप्त कर लेने पर भी माया-रूपी शल्य से मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है। हे वायुपुराधीश (श्रीकृष्ण) आप इस (मनुष्य) की रक्षा कीजिए !

(३६)

निलीनचित्तोऽस्मि भवत्कथायां
मलीमसान्तःकरणोऽपि सोऽहम् ।
खिलीकृताशेषरिपो नभस्वत्–
पुरीश मे देहि नितान्तभक्तिम् ॥

अन्तःकरण मलिन होने पर भी मैं आपकी कथाओं में लीनचित्त वाला हूँ। समस्त शत्रुओं का नाश करने वाले हे श्री गुरुवायुपुरेश ! आप मुझे अपनी अनन्य भक्ति प्रदान करें !

(३७)

पवनपुरपते पयोधिकन्या--
धव नलिनेक्षण नन्दगोपसूनो ।
खलजनकुलकाल दिव्यशोभा--
वलयित पालय मां कृपालयैनम् ॥

हे दिव्य तेज से शोभायमान, कृपागार, कमलनयन, नन्दपुत्र, लक्ष्मीपति, (तथा) दुष्टजनों के कालरूप श्री गुरुवायुपुरेश ! आप मेरा पालन करें !

(३८)

फणिपरिवृढशायिन् मारुतागारवासिन्
प्रणिपतदसुभाजां सर्वकल्याणदायिन् ।
खचितमणिविराजच्चारुकोटीरधारिन्
प्रचितविभवशालिन् चक्रपाणे नमस्ते ॥

हे शेषशायी, चक्रपाणि, अपने चरणों में नमन करने वाले सुपात्रों का समस्त कल्याण करने वाले, मणि-जटित सुन्दर शोभायमान मुकुटधारी (तथा) समस्त वैभव-सम्पन्न गुरुवायुपुरेश (श्रीकृष्ण) आपको मेरा नमस्कार है।

(३९)

बलसहज हरे सदा नभस्व–
न्निलयनिवास नितान्तकान्तमूर्ते ।
खुरदलितधरोग्रकोशिहत्या-
कर दनुजान्तक पाहि मां कृपालो ॥

सदा गुरुवायुपुरवासी, बलभद्र- भ्राता, नितान्त सुन्दर आकृति वाले, (गोरूप धारण कर) अपने खुरों से पृथ्वी को विदीर्ण करने वाले, उग्र-केशि की हत्या करने वाले (तथा) दानवों के विनाशकर्त्ता, कृपालु हरि मेरी रक्षा करें !

(४०)

भक्त्या भवत्पदयुगस्मरणैकतानो
मुक्त्याशया सकलपाल नयामि कालम् ।
खण्डेन्दुसन्निभललाट विनम्रभक्त-
षण्डेड्य वातपुरनायक पालयैनम् ॥

हे श्री गुरुवायुपुराधीश ! मैं मुक्ति की इच्छा से भक्तिपूर्वक आपके चरण-युगलों का एकाग्र स्मरण करता हुआ (अपना) समय व्यतीत करता हूँ। हे अर्द्धचन्द्र के समान ललाट वाले, विनम्र भक्त-समूहों द्वारा स्तुत, सर्वपालक देव ! (आप) मेरा पालन करें !

(४१)

महितमुनिजनेन्द्रपूतचेतो--
विहितनिवास मरुत्पुरेश शौरे ।

खलु तव करुणाकटाक्षवर्षं
कलुषहरं मयि तत्पतत्वजस्रम् ॥

महामुनिजनों के पवित्र चित्त में निवास करने वाले हे श्री गुरुवायुपुरेश ! तुम्हारे कृपाकटाक्ष की वर्षा निश्चय ही समस्त पापों को दूर करती है। वह (कृपाकटाक्ष) मेरे ऊपर निरन्तर वर्षित हो !

(४२)

यमनियमपरैरनन्यचित्तै-
र्यमिनिवहैरभिगम्यदिव्यमूर्ते ।
खमणिशतसमाभ दुष्टलोक-
प्रमथन मामव मारुतालयेश ॥

यम-नियमपूर्वक अनन्य भक्ति से (साधना करने वाले) मुनीन्द्रों द्वारा प्राप्य, शत सूर्यों के समान आभावाले, दुष्टजन-विनाशक, दिव्यमूर्ति श्री गुरुवायुपुरेश मेरी रक्षा करें !

(४३)

रणनिहतसमस्तदेवविद्विड्-
गण पवनालयवास विश्वमूर्ते ।
खचरविनुत भक्तगीतनाना-
सुचरित केशव सादरं नमस्ते ॥

युद्ध-रत समस्त देव-शत्रुओं को नष्ट करने वाले, देव-स्तुत, विश्वमूर्ति, श्री गुरुवायुपुरवासी केशव को मेरा सादर नमस्कार है, जिनके नाना सुकर्मों का भक्तगण गान करते हैं।

(४४)

लक्ष्यीकृतामृतपथं यतमानमेनं
पक्षीन्द्रवाहन भवत्पदलीनचित्तम् ।
खेदाम्बुराशिपरिमग्नमवार्तबन्धो
वेदान्तवेद्य गुरुमारुतगेहवासिन् ॥

वेदान्तों द्वारा ज्ञातव्य, गरुड़वाही, प्रार्त्तबन्धु, हे गुरुवायुपुरवासी (श्री कृष्ण) ! आप दुःखसागर में निमग्न, मोक्ष को लक्ष्यकर प्रयत्नशील, अपने चरणों में लीनचित्त इस (मनुष्य) की रक्षा कीजिए !

(४५)

वंशीलसत्करमपारकृपाम्बुराशि–
माशीविषेन्द्रशयनं मरुदालयेशम् ।
खेलापरं पशुपबालगणेन साकं
नीलाम्बरानुजमहं शरणं प्रपद्ये ॥

मैं वंशी से विभूषित करों वाले, अपार कृपासागर, गोप-बालकों के साथ क्रीड़ा करने वाले, बलभद्रानुज शेषशायी श्री गुरुवायुपुराधीश की शरण में जाता हूँ।

(४६)

शतमखमुखलेखैः सन्ततं सेव्यमानं
नतमनुजसहस्रैः स्तूयमानापदानम् ।
खलनिकरविदूरं दिव्ययोगीश्वराणां
सुलभमनिशमीडे मारुतागारवासम् ॥

मैं इन्द्रादि देवों द्वारा सतत सेवित, (चरणों में) नत सहस्रों मनुष्यों द्वारा स्तुत, दुष्टों के समूह से दूर (रहने वाले, तथा) दिव्य योगीश्वरों को सुलभ श्री गुरुवायुपुरेश की सदा स्तुति करता हूँ।

(४७)

षट्कर्मभिः स्तोत्रगणैर्निकामं
सत्कर्मभिश्चानिशमीड्यमानम् ।
ख्यातात्मवीर्यं शमितारिशौर्यं
वातालयेशं सततं भजेऽहम् ॥

मैं सत्कर्मा मनुष्यों द्वारा स्तोत्र समूहों से स्तुत तथा षट् (वैदिक) कर्मों द्वारा पूजित, शत्रु के पराक्रम का दमन करने वाले, प्रसिद्ध आत्मबली, श्री गुरुवायुपुरेश का सदा भजन करता हूँ।

(४८)

सदा सदासेव्यपदं सुराणां
मुदावहं पत्ररथेन्द्रवाहम् ।
खलातिदूरं परिदीप्ततेजो–
विलासमीडे मरुदालयेशम् ॥

मैं सज्जनों द्वारा सदा पूजित चरणों वाले, देवों के आनन्ददाता, दुष्ट जनों से दूर (रहने वाले), प्रदीप्त तेज से शोभायमान, गरुड़-वाही श्री गुरुवायुपुरेश की स्तुति करता हूँ।

(४९)

हरनुतगुणराशे गोपिकावृन्दवासो–
हर सुरदरहारिन् दुष्टसंहारकारिन् ।

खरकरसमदीप्ते मारुतागारवासिन्
परमपुरुष विष्णो पाहि मां पद्मपाणे ॥

हे शङ्कर द्वारा स्तुत गुणों वाले, गोपिकावृन्द के वस्त्रापहर्त्ता, देवों के भय को दूर करने वाले, दुष्ट-संहारी, सूर्यवत् भास्वर, पद्मपाणि गुरुवायुपुरवासी, पुराण-पुरुष विष्णु ! (आप) मेरी रक्षा कीजिए !

(५०)

लान्तकस्वनसमेतगोपशिशुरूप केशव सुरद्विषा–
मन्तक प्रथितदिव्यवैभव भवाब्धितारक जगत्प्रभो ।
खेलनोत्सुक कलिन्दजापुलिनकाननावलिषु गोपिका–
बालिकाभिरभिरामरूप मरुदालयेश परिपाहि माम् ॥

मधुरस्वरयुक्त गोपशिशु (रूपधारी), असुरविनाशक, विशाल दिव्य वैभव-सम्पन्न, संसार-सागर को पार कराने वाले, कालिन्दीतट के वनों में गोपिकाओं के साथ क्रीड़ा हेतु समुत्सुक, संसार के स्वामी, सुन्दर रूप वाले हे श्री गुरुवायुपुराधीश, मेरी रक्षा कीजिए !

(५१)

क्षीणांहःप्रकरैर्नरैरविरतं सन्दृश्यमानं जगत्--
प्राणागारपतिं निजाश्रितनृणां संसारतापापहम् ।
खिद्रान् भक्तजनान् कुबेरसदृशान् कुर्वन्तमार्तोत्करे
भद्राधानपरायणं कृतिनुतं कृष्णं समाराधये ॥

क्षीण पापों वाले मनुष्यों द्वारा सदा दृष्ट, अपने आश्रित जनों के सांसारिक कष्टों को दूर करने वाले, दरिद्र भक्तजनों को कुबेर सदृश बनाने वाले, आर्त्तजनों के कल्याण में तत्पर, सुकृती व्यक्तियों द्वारा स्तुत्य, वायुपुराधीश श्रीकृष्ण की मैं आराधना करता हूँ।

— इति प्रथमो भागः —

द्वितीयो भागः

(१)

अस्तोककान्तिपरिवेषलसन्मुखाब्जं
हस्तोढसारसविशिष्टगदारिशङ्खम् ।
ध्वस्तोद्धतासुरबलं मरुदालयेशं
शस्तोरुवैभवमजस्रमुपाश्रयेऽहम् ॥

जिनका मुख-कमल प्रभा-मण्डल से अत्यधिक कान्तिवान् है, जो हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म लिए हुए हैं; जिन्होंने उद्धत (उद्दण्ड) असुरों के समूह को विनष्ट किया है और जो प्रभूत ऐश्वर्यवान् हैं—ऐसे भगवान् विष्णु का मैं निरन्तर आश्रय लूँ।

(२)

आलोकनीयनवनीरदनीलकायं
भूलोकवासिजनसञ्चयपुण्यमूर्तिम् ।
सालोक्यदं सुकृतिनां पवनालयेशं
त्रैलोक्यनायकमहं शरणं प्रपद्ये ॥

जिनका शरीर रमणीय नव-नीरद के समान श्यामल वर्ण का है, जो सांसारिक जीवों के पुण्यों के संचित विग्रह के समान हैं, जो पुण्यात्माओं को अपना लोक प्रदान करते हैं तथा जो तीनों लोकों के अधीश्वर हैं—ऐसे भगवान् श्रीकृष्ण की मैं शरण जाता हूँ।

(३)

इनशतसमभासं वातगेहाधिवासं
मनसि मुनिवरेण्यैः सर्वदा दृश्यमानम् ।
अनवरतमनेकैर्मानुषैः सेव्यमानं
कनकरुचिरवस्त्रं कृष्णमाराधयामि ॥

जिनकी कान्ति शत-सूर्यों के समान है, जो तत्त्वद्रष्टा मुनियों के द्वारा निरन्तर अपने मन से साक्षात् देखे जाते हैं, जिनकी असंख्य प्राणियों द्वारा निरन्तर सेवा की जा रही है तथा जिन्होंने स्वर्ण-दीप्त वस्त्र धारण किये हैं—ऐसे भगवान् श्रीकृष्ण की मैं आराधना करता हूँ।

(४)

ईशादिसर्वदिविषद्गणमाननीयं
नाशादपेतमहिशायिनमप्रमेयम् ।
क्लेशापहं प्रणमतां पवनालयेश-
माशाविहीनजनमानसवासमीडे ॥

भगवान् शङ्कर आदि सभी देवताओं के पूज्य, अविनाशी, अगम्य, शेष नाग पर शयन करने वाले, भक्तों के दुःखों को दूर करने वाले तथा सांसारिक विषय-भोगों की आशा से मुक्त पुरुषों के हृदय में वास करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण की मैं आराधना करता हूँ।

(५)

उपगतमनुजानां स्वाङ्घ्रिपद्माश्रयाणा-
मपगतकलुषाणामिष्टदानैकदीक्षम् ।

उपचितरुचिदीप्रं मारुतागारवासं
कृपणजनशरण्यं कृष्णमेवाश्रयेऽहम् ॥

अपने चरण-कमलों का आश्रय देने वाले, शरणागत एवं पाप मुक्त मनुष्यों को इच्छित फल प्रदान करने वाले, परम कान्ति सम्पन्न, अशरण के शरण भगवान् श्रीकृष्ण की मैं शरण जाता हूँ।

(६)

ऊढानुकम्पमभयप्रदमाश्रितानां
गाढार्तिनाशनपरं पवनालयेशम् ।
रूढावलेपमलिनीकृतमानसानां
मूढात्मनामतिविदूरगतं भजेऽहम् ॥

भक्तों पर अनुकम्पा करने वाले, अपने आश्रितों को अभय देने तथा उनके दारुण दुःख दूर करने वाले, मिथ्याभिमान से मलिन चित्त वाले मूढ़बुद्धि पुरुषों से अति दूर स्थित श्रीकृष्ण भगवान् को मैं प्राप्त करूँ !

(७)

ऋद्धानुभावयुतमैहिकवस्तुपाली-
बद्धात्मनामविषमं सुकृतैकगम्यम् ।
शुद्धान्तरङ्गमुनिमानसराजहंस-
मिद्धादरं मरुदगारपतिं भजेऽहम् ॥

ऋद्धि आदि प्रभाव से युक्त, लौकिक वस्तुओं में आबद्ध अज्ञानी व्यक्तियों द्वारा अज्ञेय, पुण्यात्माओं के द्वारा सुबोध, निर्मल अन्तःकरण वाले मुनियों के मन-रूपी मानसरोवर के लिए राजहंस, पूज्य पवनालयेश की मैं आराधना करता हूँ।

(८)

ऋनाशनैकनिपुणं कृतदुष्कृतानां
कीनाशमप्रतिमनैकविधापदानम् ।
दीनावनैकनिरतं मरुदालयेशं
मानातिरिक्तमहसं समुपाश्रयेऽहम् ॥

पापियों, दुष्कर्मियों तथा राक्षसों का विनाश करने में कुशल, दीनों की रक्षा में तत्पर अतुलनीय तेज वाले तथा नानाविध अनुपम दिव्य कृतियों वाले श्रीकृष्ण भगवान् की मैं शरण प्राप्त करूँ।

(६)

ऌभारभूतदानवान् विनाशयन्तमन्वहं
प्रभाविशेषरूपणैर्विराजमानविग्रहम् ।
शुभावहावलोकनं मरुत्पुरीनिकेतनं
प्रभावपूर्णदैवतं भजे हरिं सदैव तम् ॥

सदैव पृथ्वी के भार-स्वरूप राक्षसों का विनाश करने वाले, प्रभामण्डल विशेष के वर्तुल से सुशोभित शरीर वाले, कल्याणकारी दर्शन वाले, मरुतागार में निवास करने वाले, प्रभा-युक्त श्रीकृष्ण की मैं सदैव आराधना करता हूँ।

(१०)

ॡरूपधृङ्नृगनृपाय कृपातिरेकात्
सारूप्यदं गुरुसमीरपुराधिवासम् ।
चारूत्तमाङ्गविलसच्छिखिपिञ्छजाल-
मारूढभक्तिविनयः स्वयमाश्रयेऽहम् ॥

दयाधिक्य से गिरगिट रूपधारी राजा नृग को सारूप्यमुक्ति देने वाले, सुन्दर सिर पर सुशोभित मयूर पङ्ख समूह वाले, पवनागार में निवास करने वाले, भक्ति एवं विनम्रता से युक्त मैं स्वयं उनका आश्रय लेता हूँ।

(११)

एकमेव मरुदालयाधिपं
शोकनाशनपरायणं सताम् ।
सूकराकृतिधरं दिवौकसां
श्रीकरं नरकनाशनं भजे ॥

पवनागार के एकमात्र स्वामी, सज्जनों के दु:ख दूर करने में सर्वथा लीन, सूकर का रूप धारण करने वाले, देवताओं को समृद्धि प्रदान करने वाले, नरकासुर का नाश करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण की मैं आराधना करता हूँ।

(१२)

ऐदम्पर्यं निगमवचसां निस्तुलानन्दसान्द्रं
खेदध्वान्तप्रकरमिहिरं मारुतागारवासम् ।
वेदप्रोक्तप्रथितमहिमाम्भोनिधिं गोपिकानां
मोदप्रोज्जृम्भणकृतमहं कृष्णमाराधयामि ॥

वेद-शास्त्र-वचनों के मूल विषय, अतुलनीय आनन्द से घनीभूत, दु:खान्धकार समूह के लिए सूर्य, वेद-कथित विस्तृत गौरव के समुद्र, गोपियों के आनन्द वृद्धिकर्त्ता पवनागारवासी श्रीकृष्ण की मैं उपासना करता हूँ।

(१३)

ओङ्काररूपमतिसान्द्रकलायपाली-
सङ्काशवर्णमभिचूर्णितदुष्टलोकम् ।
पङ्कापहं मरुदगारपतिं जनानां
तङ्कापनोदनपरं परमाश्रयेऽहम् ॥

ओङ्कार रूप, अत्यधिक घने कलाय पुष्प समूह-सदृश वर्ण (रंग) वाले, अधम (दुष्ट) समूह को नष्ट करने वाले, भक्तों के पाप (कलुष) एवं कष्टों के अपहरण में तत्पर पवनालयेश का मैं आश्रय लेता हूँ।

(१४)

औपम्यहीनगुणमप्रतिमप्रभावं
कापट्यहीनमनसामवलोकनीयम् ।
श्रीपद्मनाभमजनिं पवनालयेश-
मापन्नलोकपरिपालकमाश्रयेऽहम् ॥

अनुपम गुण वाले, अतुल्य प्रभाव वाले, निष्कपट मन वालों के द्वारा दर्शनीय, अजन्मा, पीड़ितों की रक्षा करने वाले, पद्मनाभ, पवन-गृह के स्वामी श्रीकृष्ण का मैं आश्रय लेता हूँ।

(१५)

अंभोजलोचनमवर्ण्यगुणापदानं
दम्भोलिपाणिमुखनिर्जरसेव्यमानम् ।
शम्भोरपि प्रियकरं मरुदालयेशं
तं भोगमोक्षदमजस्रमुपाश्रयेऽहम् ॥

कमल नेत्र, अवर्णनीय गुण-समूह वाले, इन्द्रादि प्रमुख देवताओं से सेवित, शिव का भी प्रिय करने वाले, भोग एवं मोक्ष प्रदान करने वाले पवनागार के स्वामी का मैं आश्रय लेता हूँ।

(१६)

अः पातु मारुतनिकेतननायको मा-
मापादमस्तकमनोहरदिव्यरूपः ।
व्यापादितासुरगणः स निजाङ्घ्रिभाजा-
मापादिताखिलसुखः सुतरामुपेन्द्रः ॥

नख-शिख पर्यन्त सुन्दर एवं अलौकिक रूपवाले, असुर समूह को नष्ट करने वाले, अपने चरणों की सेवा करने वालों के लिए सम्पूर्ण सुखों को प्रदान करने वाले उपेन्द्र मेरी अत्यधिक रक्षा करें।

(१७)

करसरसिजराजत्कम्बुचक्रासिपद्मं
नरकदनुजकालं सर्वलोकैकपालम् ।
दरहरममराणां मारुतागारवासं
मुरमथनमस्त्रं भावये भावनीयम् ॥

नरकासुर के लिए यम-रूप, अखिल विश्व के एकमात्र रक्षक, देवताओं के भयनाशक, मुर नामक राक्षस के नाशकर्त्ता तथा ध्यान करने योग्य श्री गुरुवायुपुरेश का मैं ध्यान करता हूँ, जिनके कर-कमल शंख, चक्र, खड्ग तथा पद्म से सुशोभित हैं।

(१८)

खगाधिराजवाहनं व्रजाङ्गनाविमोहनं
प्रगाढभक्तिशालिनामभीष्टकार्यदोहनम् ।

अगाधशेमुषीजुषाऽप्यचिन्तनीयवैभवं
मृगाङ्ककोमलाननं भजे मरुत्पुरेश्वरम् ॥

गरुड़वाही, गोपांगनाओं को प्रलोभित करने वाले, परम भक्तिसंयुत मानवों के अभीष्ट कार्य के पूर्ण कर्त्ता तथा प्रकाण्ड विद्वानों के द्वारा भी अचिन्तनीय समृद्धि से सम्पन्न उन श्री गुरुवायुपुरेश की मैं आराधना करता हूँ, जिनका मुख चन्द्रमा के समान रमणीय है।

(१९)

गतविषयतृषां हृदब्जवासं
विततमनोहरपिञ्छशोभिशीर्षम् ।
सततमसुमतां विभावनीयं
कृतगुरुवायुपुराधिवासमीडे ॥

विषय-तृष्णा रहित मनुष्यों के हृदय-कमलवासी, विस्तृत मोरपंख से सुशोभित शिर वाले तथा साधुभावी मनुष्यों द्वारा सदा चिन्तनीय गुरुवायुपुरवासी श्रीकृष्ण की मैं स्तुति करता हूँ।

(२०)

घनतरमुदमात्मभक्तिभाजां
मनसि सदा जनयन्तमन्तहीनम् ।
विनतजनपरीतमाश्रयेऽहं
विनयपुरस्सरमाशुगालयेशम् ॥

निज भक्तों के हृदय में सदा अमित आनन्द के जनक, तथा अविनाशी, विनीत जनों से सदा परिवृत श्री गुरुवायुपुरेश का मैं विनम्रतापूर्वक आश्रय लेता हूँ।

(२१)

ङश्यामकोमलकलेबरमब्जनाभं
पश्यामि दिव्यमहसं पुरतः कदाऽहम् ।
वश्यात्मवासरसिकं विमलाशयानां
दृश्याकृतिं गुरुसमीरपुराधिवासम् ॥

कज्जल के सदृश रमणीय श्यामल शरीर वाले तथा आत्मसंयमी लोगों के हृदय में निवास करने में प्रसन्नता अनुभव करने वाले उन श्री गुरुवायुपुरेश को कब मैं अपने सम्मुख देखूँगा, जो निर्मल हृदय व्यक्तियों को दृष्ट हैं तथा जिनकी कान्ति दिव्य है।

(२२)

चरणयुगलनम्रान् सर्वदा पावनान्तः–
करणयुतमनुष्यान् पालयन्तं नितान्तम् ।
निरयपतितसाधूनुद्धरन्तं भजेऽहं
सुररिपुशमनं तं मारुतागारनाथम् ॥

निज चरण युगल में सतत विनत पवित्र अन्तःकरण वाले व्यक्तियों के सर्व प्रकार से परिपालक, नरक में पतित सज्जनों के उद्धारक तथा देव-शत्रु असुरों के संहारक श्री गुरुवायुपुरेश की मैं आराधना करता हूँ।

(२३)

छलपशुपकुमारं सर्ववेदान्तसारं
खलनिकरविदूरं सज्जनाम्भोजसूरम् ।

बलरिपुसहजातं नाशिताज्ञानजातं
जलजनयनमीडे वातगेहाधिवासम् ॥

कमल-नेत्र तथा श्री गुरुवायुपुर निवासी श्रीकृष्ण की मैं स्तुति करता हूँ, जो ग्वाल-बाल का छद्मवेश धारण करने वाले, सम्पूर्ण वेदान्त के तत्त्व, दुष्टों को अप्राप्य, सज्जनरूपी कमलों के लिए सूर्य के समान, इन्द्र के सहोदर भ्राता तथा अज्ञान समूह के विनाशक हैं।

(२४)

जनिमरणविहीनं स्तुत्यनानापदानं
जनिमदवनलोलं पीतकौशेयचेलम् ।
अनिशमशरणानामाश्रयं भावयेऽहं
मुनिहृदयनिवासं श्रीसमीरालयेशम् ॥

जन्म-मृत्यु से रहित, प्रशंसनीय अनेक कार्यों को करने वाले, प्राणियों की रक्षा को उत्सुक, पीताम्बरधारी, असहायों के आश्रय तथा मुनि-मानस में निवास करने वाले श्री गुरुवायुपुरेश का मैं ध्यान करता हूँ।

(२५)

झणत्क्वणितनूपुरं सुजनकीर्तितानेकसद्-
गुणप्रकरसागरं प्रकटकान्तिदीप्राननम् ।
प्रणम्रजनरक्षकं समनुरक्तगोपाङ्गना-
गणप्रमदकारणं मरुदगारवासं भजे ॥

जिनके चरणों में नूपुर झंकृत हो रहें हैं, जो सज्जनों द्वारा प्रशंसित अनेकों गुणों के सागर हैं, जिनका मुख अमित आभा से

देदीप्यमान है, जो प्रणत जनों की रक्षा करते हैं तथा जो प्रेमी गोपिकाओं के आनन्द के हेतुभूत हैं—ऐसे गुरुवायुपुरेश की मैं आराधना करता हूँ।

(२६)

व्यभञ्जनं दानवसैनिकानां
प्रभञ्जनागारविराजमानम् ।
स्वभक्तलोकावनजागरूकं
विभग्नदुष्टप्रकरं भजेऽहम् ॥

असुर सेना के विनाशक, निज भक्तों की रक्षा में सदा जागरूक, दुष्टों का संहार करने वाले तथा वायुगृह में विराजमान (श्रीकृष्ण) की मैं आराधना करता हूँ।

(२७)

टीके समीरपुरनायकमात्मभक्त-
लोकेष्टदाननिरतं निरघाभिगम्यम् ।
नाकेशमुख्यसुरवन्दितपादपद्मं
राकेन्दुसुन्दरमुखं वसुदेवसूनुम् ॥

अपने भक्तों को अभीष्ट फल प्रदान में तत्पर, निष्पाप व्यक्तियों द्वारा सुगम्य, इन्द्रादि प्रमुख देवताओं से आराधित चरण-कमल वाले, पूर्ण चन्द्र सम सुन्दर मुख वाले गुरुवायुपुरेश श्रीकृष्ण की मैं स्तुति करता हूँ।

(२८)

ठमाननीयविग्रहं कृतामरारिनिग्रहं
समानतेष्टदायकं समीरगेहनायकम् ।
सुमानवाभिनन्दितं सुराधिराजवन्दितं
स्वमानसेऽभिवादये समस्तकार्यसिद्धये ॥

शिव के द्वारा भी पूज्य विग्रह वाले, देवशत्रु असुरों का दमन करने वाले, भक्तों को अभिमत फल प्रदान करने वाले, सज्जनों द्वारा अभिनन्दित तथा इन्द्र द्वारा भी पूजित श्री गुरुवायुपुरेश का मैं अपने सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि के लिए अपने मन में अभिवादन करता हूँ।

(२९)

डामरासुरविनाशनं महः-
स्तोमदीप्रममराभिसेवितम् ।
कोमलाननलसत्स्मितं मरुद्-
धामनायकमजस्रमाश्रये ॥

जो भयंकर असुरों के विनाशक हैं, जो अतिशय कान्ति से देदीप्यमान हैं, देवताओं द्वारा सेव्य हैं तथा जिनका मृदुल मुख मन्दस्मित से सुशोभित है—उन श्री गुरुवायुपुरेश का मैं निरन्तर आश्रय लेता हूँ।

(३०)

ढौकिताखिलजनाभयप्रदं
नाकिपालकमुपेन्द्रमाश्रये ।
लौकिकेप्सितविहीनमानवा-
लोकितं मरुदगारनायकम् ॥

अपने सभी शरणागतों को अभय प्रदान करने वाले, देवताओं के रक्षक, लौकिक कामना-रहित मनुष्यों के दर्शन के विषय श्री गुरुवायुपुरेश का मैं आश्रय लेता हूँ।

(३१)

णं गोपिकानां महितर्षिचेतो-
रंगोपविष्टं पवनालयेशम् ।
गंगोदयस्थानविशिष्टपादं
भृंगोपमाङ्गाभमुपाश्रयेऽहम् ॥

गोपियों को सुख देने वाले, महर्षियों के मन-रूपी रंगमंच पर विराजमान तथा भ्रमर के समान अङ्ग की कान्ति वाले श्री गुरुवायुपुरेश का मैं आश्रय लेता हूँ, जिनका अनुपम चरण, गंगा का उद्गमस्थल है।

(३२)

तमालनीलं तरुणारुणाभं
क्षमागुणाम्भोनिधिमञ्जनाभम् ।
प्रमाथिनं दुष्टजनोत्कराणां
समाश्रये मारुतमन्दिरेशम् ॥

जिनका वर्ण तमाल के समान नील है, जिनकी कान्ति नवोदित सूर्य के सदृश है, जो क्षमादि गुणों के सागर तथा दुष्टों के विनाशकर्त्ता हैं, उन श्री गुरुवायुपुरेश का मैं आश्रय लेता हूँ, जिनके शरीर की आभा कज्जल के सदृश है।

(३३)

थमादधानं वरपण्डितानां
सुमानवानां चरणानतानाम् ।
समाहितान्तःकरणैर्निरीक्ष्यं
नमामि देवं मरुदालयेशम् ॥

श्रेष्ठ विद्वानों, सज्जनों तथा निज चरणों में प्रवनत व्यक्तियों की रक्षा करने वाले तथा प्रशान्त अन्तःकरण से दृष्ट श्री गुरुवायुपुरेश को मैं नमस्कार करता हूँ।

(३४)

दनुजान्वयनाशनं सदा स-
न्मनुजानामपवर्गदानदीक्षम् ।
विनुतं कविभिर्मरुत्पुरेशं
तनुमन्मानवपुण्यमाश्रयेऽहम् ॥

असुर वंश का विनाश करने वाले, सज्जनों को मोक्ष प्रदान करने को सदा समुत्सुक, कवियों द्वारा प्रशंसित तथा मनुष्यों के मूर्त्तिमान् पुण्य-रूप गुरुवायुपुरेश श्रीकृष्ण का मैं आश्रय लेता हूँ।

(३५)

धाराधरोपमरुचिं रुचिराङ्गभासं
श्रीराजमानवदनं मरुदालयेशम् ।
घोरासुरान्तकमपारकृपापयोधिं
नारायणं नरसखं शरणं प्रपद्ये ॥

नवनीरद के समान श्यामकान्ति वाले, मनोहर अंग से दीप्तिमान्, सौन्दर्य से सुशोभित मुख वाले तथा असुरों के लिए यम-रूप, अर्जुन के सखा नारायण (श्री गुरुवायुपुरेश) की मैं शरण प्राप्त करता हूँ, जो कृपा के असीम सागर हैं।

(३६)

नतजनपरितापं सर्वमुन्मूलयन्तं
शतमखमुखलेखान् सर्वदा पालयन्तम् ।
कृतयमनियमानां योगिनामीक्षणीयं
विततरुचिविदीप्रं नौमि वातालयेशम् ॥

जो विनत भक्तों के सम्पूर्ण दु:खों का उन्मूलन करते हैं तथा इन्द्रादि प्रमुख देवताओं की सदा रक्षा करते हैं, यम-नियम का पालन करने वाले योगियों को सदा दृष्ट तथा व्यापक तेज से देदीप्यमान हैं—ऐसे गुरुवायुपुरेश को मैं नमस्कार करता हूँ।

(३७)

पवनपुरनिवासं वासुदेवं कवीनां
कवनविषयभूतं भूतजालैकपालम् ।
अवनविधिसमर्थं स्वाङ्घ्रिभाजां यशोदा-
भवनविहितलीलं बालकृष्णं भजेऽहम् ॥

कवियों के काव्य के विषयभूत, प्राणीमात्र के एकमेव पालक, निज चरणागतों की रक्षा करने में समर्थ, यशोदा-गृह में क्रीड़ा करने वाले, पवनालयेश बालकृष्ण की मैं आराधना करता हूँ।

(३८)

फणिशायिनमाशुगालयेशं
घृणिराजन्महनीयदिव्यरूपम् ।
प्रणिधानपरायणाभिदृश्यं
प्रणिपत्यानिशमाश्रये मुकुन्दम् ॥

शेषनाग पर शयन करने वाले, तेज से देदीप्यमान, महान् अलौकिक स्वरूप वाले पवनालयेश मुकुन्द को मैं नमस्कार करता हूँ तथा उनका आश्रय लेता हूँ, जो एकाग्रचित्त वाले व्यक्तियों को दृष्ट हैं।

(३९)

बलदेवसहोदरं मुरारिं
खललोकैरनिरीक्ष्यमक्षताभम् ।
छलगोपशिशुं मरुत्पुरेशं
जलजाक्षं सततं समाश्रयेऽहम् ॥

बलराम के अनुज, दुष्ट मनुष्यों को अदृष्ट, अक्षीण कान्तिवाले, कपटी गोप बालक का रूप धारण करने वाले तथा कमल से नेत्र वाले मरुत्पुरेश (मुरारि) का मैं निरन्तर आश्रय लेता हूँ।

(४०)

भुवनैकनियामकं व्रजस्त्री-
भवनस्तोमकृतात्मबाललीलम् ।
भवतापहरं सतां नितान्तं
पवमानालयनायकं भजेऽहम् ॥

मैं पवनगृहपति की उपासना करता हूँ, जो विश्वनियन्ता, व्रजांगनाओं के प्रांगण में बाल-सुलभ लीलाएं करने वाले तथा सज्जनों के समस्त सांसारिक कष्टों के अपहर्त्ता हैं।

(४१)

मददूषितमानसानवेक्ष्यं
मदनारेरपि मोदमादधानम् ।
कदनापनुदं नृणां नभस्वत्-
सदनाधीशमुपाश्रयेऽनुवेलम् ॥

कामारि शिव को आह्लादित करने वाले तथा मनुष्यों के पापों को दूर करने वाले वायुगृहपति का मैं बारम्बार आश्रय लेता हूँ, जो अहंकार से मलिन मन वाले व्यक्तियों के लिए अनवलोकनीय हैं।

(४२)

यदुकुलार्णवपूर्णनिशाकरं
विदुरकीर्तितदिव्यगुणोत्करम् ।
मृदुलपीतदुकूलमृभुद्विषां
भिदुरमाशुगवेश्मपतिं भजे ॥

यदुवंश-रूपी सागर के लिए पूर्णेन्दु, विद्वानों द्वारा स्तुत दिव्य गुणों वाले, कोमल पीताम्बर धारण करने वाले, देवशत्रु राक्षसों का विनाश करने वाले पवनालयेश की मैं आराधना करता हूँ।

(४३)

राजीवलोचन हरे भगवन् नवाभ्र-
राजीसवर्ण गुरुवायुपुरेश शौरे ।
जेजीयमानमहिमन्नखिलामरारि-
जाजीन्धनानल कृपालय पालयैनम् ॥

कमलनयन, नवीन मेघ के समान (श्याम) वर्ण वाले, सम्पूर्ण दानवों की सेना-रूपी इन्धन के लिए अग्नि स्वरूप, प्रशस्त महिमा वाले, दया के आगार, हे भगवान् गुरुवायुपुरेश ! मेरी रक्षा कीजिए ।

(४४)

लीलाविशेषविषयीकृतगोपवाटं
नीलारविन्दनिभनिर्मलनीलभासम् ।
वेलातिरिक्तकरुणार्णवमाश्रयेऽहं
नीलालकाञ्चितमुखं मरुदालयेशम् ॥

गोपों के अहातों को अपनी क्रीड़ा का विषय बनाने वाले तथा नील-कमल के समान निर्मल, श्याम कान्ति वाले पवनालयेश का मैं आश्रय लेता हूँ, जो असीम करुणा के सागर हैं तथा जिनका मुख, काले घुंघराले बालों से शोभायमान है ।

(४५)

विनताश्रितपालनैकदीक्षं
विनतानन्दनवाहनं रमेशम् ।

जनतापनुदं जनार्दनं तं
मनसाऽहं कलये मरुत्पुरेशम् ॥

मैं जनार्दन (वायुपुरेश) का मन से चिन्तन करता हूँ, जो विनत शरणागतों की रक्षा करने में तत्पर रहते हैं, विनतापुत्र गरुड़ जिनका वाहन है, जो रमापति हैं तथा मानवमात्र के दुःख दूर करते हैं।

(४६)

शकटासुरनाशनं जनानां
प्रकटानन्ददमाशुगालयेशम् ।
निकटागतलोकपारिजातं
विकटाधृष्यमजस्रमाश्रयेऽहम् ॥

शकट नामक दैत्य का वध करने वाले, अपने (भक्त) जनों को आनन्द प्रदान करने वाले, शरणागतों के (इच्छानुरूप फल देने वाला) पारिजातक वृक्ष तथा दुष्ट मनुष्यों के लिए अगम्य हे वातालयेश ! मैं आपका निरन्तर आश्रय लेता हूँ।

(४७)

षडङ्घ्रिमात्माङ्गरुचाऽतिवेलं
विडम्बयन्तं पवनाळयेशम् ।
अडम्बरावाप्यमजस्रमीडे
तृडंशहीनैर्मुनिभिर्निरीक्ष्यम् ॥

भ्रमरोपम कान्ति वाले वातालयेश की मैं निरन्तर स्तुति करता हूँ, जो अहंकार-रहित मानव को ही प्राप्य हैं तथा निरीह (इच्छारहित) मुनिजन ही जिनका दर्शन करने में सक्षम हैं।

(४८)

सततं भवदीयपादसेवा-
वितताशं विविधार्तिपीडितं माम् ।
वितनुष्व निकाममाप्तकामं
श्रितरक्षापर वातगेहवासिन् ॥

अपने आश्रित जनों की रक्षा में तत्पर हे गुरुवायुपुरेश, मैं नाना प्रकार के दुःखों से आक्रान्त आपके पादाम्बुजों की निरन्तर सेवा का अत्यधिक आकांक्षी हूँ। आप मेरी समस्त कामनाओं को पूर्ण कीजिए।

(४९)

हृतदितिसुतजाल भक्तलोका-
वृत पवमानपुरेश विश्वमूर्ते ।
अतनुतनुरुचा जितोद्यदर्का-
युत परिपालय मां दयापयोधे ॥

हे असुर-समूह को नष्ट करने वाले, निज भक्तों से आवृत, विश्वमूर्ति, शरीर की प्रभूत कान्ति से सहस्रों उदीयमान सूर्यों को हतप्रभ करने वाले, दयासिन्धु पवनालयेश ! मेरी रक्षा कीजिए।

(५०)

ळमध्याकराजल्ललाटं स्वगान-
क्रमप्रीणिताशेषगोपीकदम्बम् ।

नमस्यार्हमीशादिकानां भजेऽहं
समस्तेष्टदं वातगेहाधिवासम् ॥

मैं श्री गुरुवायुपुरेश की उपासना करता हूँ, जिनका मस्तक घुंघराले बालों से सुशोभित है, जो अपने मधुर गान से समस्त गोपियों को मुग्ध करते हैं, जो शिव आदि देवों के भी वन्दनीय हैं तथा (निज भक्तों को) समस्त अभिलषित पदार्थ प्रदान करते हैं।

(५१)

क्षन्तव्यो मेऽपराधः पवनपुरपते स्तोत्रनिर्मातुरेवं
मन्तव्योऽहं विमूढः शिशुरिति भवता भक्तवात्सल्यराशे ।
अन्तर्भक्त्याद्य वर्णक्रमरचितमिमं स्तोत्ररूपं प्रबन्धं
स्वान्तप्रीत्या गृहाण प्रविहितजगदामोद दामोदर त्वम् ॥

हे पवनपुरपति ! स्तोत्र निर्माण के मेरे इस अपराध को क्षमा कीजिए। भक्त पर अपार स्नेह करने वाले, आप मुझे मूर्ख बालक के समान समझें। संसार को आनन्द प्रदान करने वाले हे दामोदर ! अब आप हार्दिक भक्ति द्वारा वर्णक्रमानुसार रचित इस स्तोत्ररूप-प्रबन्ध को स्वान्तप्रीति से स्वीकार कीजिए।

॥ इति द्वितीयो भाग : ॥

———

योग - वेदान्त

(हिन्दी मासिक-पत्र)

संस्थापक—श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती
सम्पादक—श्री स्वामी चन्द्रशेखरानन्द सरस्वती
वार्षिक चंदा : रु० ४/००, एक प्रति ३५ पैसे।

यह पत्र शिवानन्द हिंदी साहित्य का अनमोल रत्न है।

"योग वेदान्त आरण्य अकादमी" का मुख-पत्र होने से इसमें सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, योग और वेदान्त विषयक सुबोधगम्य सामग्री रहती है।

योग के जटिल अर्थ को साधारण जन-समाज में सरल रीतियों से समझाने के लिए यह उत्तम माध्यम है। अपने पवित्र विचारों को लेकर यह पत्र नवीन आध्यात्मिक युग की शङ्खध्वनि सुनाता है।

इस पत्र में सर्वसाधारण के लेखों को प्रकाशित नहीं किया जाता है, किन्तु अनुभव के आधार पर जो लेख लिखे गये हों और जिनके विचारों की पृष्ठभूमि ठोस और प्रामाणिक हो, ऐसे लेखों को ही इस पत्र में प्रकाशित किया जाता है। जीवनोपयोगी व्यावहारिक सिद्धान्त को प्रकट करने वाले लेख पत्र में अवश्य प्रकाशित किये जाते हैं।

यह पत्र किसी सम्प्रदाय विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करता, किन्तु विश्वात्म-भावना के उद्देश्य को अंगीकार कर, केवल उसी सिद्धान्त का हर रीति से प्रतिपादन करता है।

योग-वेदान्त,
डिवाइन लाइफ सोसायटी, पो० शिवानन्दनगर,
जिला टिहरी-गढ़वाल (उ०प्र०)

लेखक की अन्य पुस्तकें—

१. शिवानन्द स्तोत्रपुष्पाञ्जलि भाग–१ एवं २
२. शिवानन्द सुप्रभातम्
३. शिवानन्द सहस्रनाम स्तोत्रम्
४. शिवानन्द सहस्रनामावलि :
५. शिवानन्द चरितम्
६. गुरुवायुपुरेश सुप्रभातम्

मुद्रक : योग-वेदान्त आरण्य अकादमी प्रेस, शिवानन्दनगर।